ओ३म्

'आओ, सोम–सरोवर के भक्ति रस–जल में स्नान कर आनन्दित हों'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

सामवेद उपासना तथा ईश्वर की स्तुति–गान का वेद है। उपासना ईश्वर के पास बैठकर आनन्द में सराबोर होना है। इसे सोम सरोवर का स्नान भी कह सकते हैं। पं. चमूपति महर्षि दयानन्द के आदर्श अनुयायी थे। वह उर्दू, अरबी, फारसी व अंग्रेजी के विद्वान होने के साथ संस्कृत व हिन्दी के भी विद्वान थे। आपने अनेक भाषाओं में रचनायें की है। आपकी अनेक प्रसिद्ध रचनाओं में से एक है **''सोम सरोवर''**। इस पुस्तक में आपने सामवेद के पवमान सूक्त के मन्त्रों की भक्ति रस में डूब कर व्याख्या की है जो हृदय को झंकृत कर उसमें आस्तिक भाव को उत्पन्न करती है और जीवात्मा–पुरूष आनन्द रस में भरकर हरा–भरा हो जाता है। **आर्यसमाज के एक दूरदर्शी नेता पत्रकार शिरोमणि महाशय कृष्ण की 'सोम सरोवर' के सम्बन्ध में यह सम्मति थी कि यह विश्व के सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थों में से एक है। जिन साहित्यिक ग्रन्थों पर साहित्य का नोबेल पुरस्कार दिया जा चुका है, सोम सरोवर ऐसे कई ग्रन्थों से कहीं ऊंचा व श्रेष्ठ है।** सोम–सरोवर पुस्तक का महत्व बताते हुए प्रसिद्ध लेखक एवं विद्वान राजेन्द्र जिज्ञासु ने लिखा है कि **हिन्दी के साहित्यकार, प्राध्यापक व प्रेमी यह जान लें कि हिन्दी साहित्य में इस कोटि की दूसरी पुस्तक अब तक तो लिखी नहीं गई। यदि कोई है तो वह पं. चमूपति कृत जीवन–ज्योति है।** आईये इस पुस्तक सोम–सरोवर से दो मन्त्रों का पाठ व उसकी व्याख्या पढ़कर सरोवर में स्नान का आनन्द लेते हैं।

मन्त्र है: **यस्ते मदो वरेण्यस्तेनापवस्वान्धसा। देवावीरघशंसहा।।** लेखक ने इस मन्त्र का शीर्षक **''पाप–नाशक नशा''** दिया है। मन्त्र का ऋषि है **'अमहीयुः'** अर्थात् एक ऐसा मनीषी जो पृथिवी की नहीं, आकाश से भी ऊपर द्युलोक की उड़ान लेने वाला। पहले इस मन्त्र के पदों वा शब्दों के अर्थ जान लेते हैं। (ते) तेरा (यः) जो (वरेण्यः) ग्रहण करने लायक (मदः) नशा है (तेन) उस (अन्धसा) प्राणप्रद संजीवन–रस से (आपवस्व) चारों ओर पवित्रता का प्रवाह चला। तू (देवावीः) दिव्य भावनाओं तथा दिव्य प्रजाओं का रक्षक तथा (अघशंसहा) पाप की प्रशंसा का घातक है।

अन्य सब नशे छोड़ देने चाहिए। वे मैले हैं, अपवित्र हैं। उन में पाप का पुट है। वे हिंसा से पैदा होते हैं। उन के खमीर में पाप है। वे पाप ही की उपज हैं और पाप ही की प्रेरणा करते हैं। परन्तु मोहन ! तेरे प्रेम का नशा प्राणप्रद है। इस से स्वास्थ्य बढ़ता है। इस के पान से शरीर नया जीवन–लाभ करता है। और मन की तो काया–पलट सी हो जाती है। यह नशा अत्यन्त पवित्र, अत्यन्त सुखदायक है।

देवताओं के लिए यह नशा अमृत है। दैवी प्रवृत्तियां सो रही हों तो इस नशे का ध्यान आते ही जाग जाती हैं, झूमने लगती हैं। भली भावना किसी संकट के कारण मृतप्राय हो तो केवल जी ही नहीं, लहलहा उठती हैं। साईं के स्नेह का नशा सत्य की, सरलता की, सन्तोष की, सदाचार की रक्षा करता है। लाख आपत्तियां आती हों, साईं का स्नेही धर्म के रास्ते से नहीं हटता। धर्म के लिए संकट सहने में उसे आनन्द आता है। **पाप की मोहिनी साईं के स्नेह के सम्मुख एक क्षण के लिए भी नहीं ठहर सकती।**

हमारा मन भटक जाता है। उस की रूचि पाप की ओर हो जाती है। कोई अन्दर–अन्दर से मानो दबी सी आवाज में पाप की प्रशंसा करने लगता है। दिल कहता है–पाप है तो क्या, इस से लाभ ही होगा, झूठ बोल दो,

इस से एक अपना ही नहीं, सम्पूर्ण जाति का लाभ है। परोपकारार्थ छल करने से क्या दोष है? इस प्रकार के कितने छल हैं जो मेरा छली मन रोज करता रहता है।

प्रभो ! आप की आंख बचा कर तो यह छल चल भी जाये, परन्तु आप के सामने आते ही यह मोह––अज्ञान का ताना–बाना छिन्न–भिन्न हो जाता है। आप की एक कृपा–कोर लाख पापों का बंटाढार कर देती है।

तो फिर वह आप की कृपा–कोर कहां है? मेरे लिए वही सोम है। मैं उसी का प्यासा हूं। एक प्याली! एक घूंट!! एक बूंद!!!

हम आशा करते हैं कि उक्त मन्त्र की व्याख्या से पाठक आनन्दित एवं भाव–विभोर हुए होंगे। एक अन्य मन्त्र की व्याख्या और प्रस्तुत कर रहे हैं। इस मन्त्र का शीर्षक है 'इन्द्र की अर्चना'। मन्त्र प्रस्तुत हैः **'इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः। अर्कस्य योनिमासदम्।। मन्त्रार्थः** (इन्दो) ऐ जगत् को सरसाने वाले स्नेह–रस के सुधाकर मुझ (मरुत्वते) प्राणों वाले (इन्द्राय) मुझ इन्द्रियों वाले देहधारी के लिए (मधुमत्तमः) अत्यन्त मधुर होकर (पवस्व) पवित्रता का प्रवाह चला। मैं (अर्कस्य) अर्चना के (योनिम्) मन्दिर में (आसदम्) प्रवेश कर रहा हूं।

मेरे प्राण प्रबल हैं। शरीर स्वस्थ हैं। अंग–अंग में स्फूर्ति है। निठल्ला बैठने को जी नहीं चाहता। दसों इन्द्रियां शक्तिशाली हैं। यह सब कुछ होते हुए भी जीवन नीरस है। स्वास्थ्य के साथ भी दिन बीत जाता है। रोग की अवस्था में भी ज्यों त्यों रात कट जाती है। किसी ने कराह–कराह कर समय गुजार दिया, किसी ने हंस खेल कर दिन बिता दिये। स्मृति दोनों की नीरस है।

मुझे शक्ति का अभिमान तो होता है, रस नहीं मिलता। गर्व से गर्दन उठा देता हूं और वह ऐंठ जाती है। पर ऐंठ में रस कहां? रस तो लचक में है। हां लचक ही में जीवन है।

प्रभो ! कोई लचकीला आनन्द ! कोई स्थायी स्थिर रस ! सुनता हूं, स्थिर रस तुम्हारी कृपा–कोरों में है। तुम्हारी कृपा–कोरों की चांदनी चांद के, तारों के प्रकाश के साथ–साथ जगत् को व्याप्त कर रही है। आकाश–गंगा प्रेम की गंगा बहाये जा रही है। मेरे हृदय–चकोर के चांद ! तुम्हारी स्निग्ध किरणों ने ही तो अपने स्नेह–रस में सम्पूर्ण प्रकृति को गूंध–गूंध कर रसमय बना दिया है। तुम्हारा हृदय यदि आर्द्र न होता तो अणु–अणु पृथक भले ही रह जाता, पर इस में तरी न आती। पिण्ड न बनते। ब्राह्माण्डों की सृष्टि–संसृष्टि–न हो पाती।

हे सृष्ट जगत् के संजीवन–रस। एक कृपा–कोर मेरी ओर भी।

मैं अपने ताप का कारण समझ गया हूं। वह है तुम्हारी करुणा से विमुखता। मेरे पास स्वास्थ्य है, स्फूर्ति है, पर इन दोनों का सार–तुम्हारा स्नेह मेरी आंखों से दूर है।

हे प्राणों के प्राण ! मेरे प्राणों को अपनी स्नेह–सुधा से अनुप्राणित कर दो। मेरे जीवन को अपनी संजीवनी से उज्जीवित कर दो। मेरी इन्द्रियां तुम्हारी अर्चना के फूल बन जायें। मेरे प्राण तुम्हारी पूजा के नैवेद्य हों। आज मेरा नया जन्म हो। अर्चना के जीवन का जन्म। पूजा के नवजीवन का उदय।

मैं झुक जाऊं, लचक जाऊं, तुम्हारे चरणों में तन, मन, धन–सब अर्पण कर दूं। सफलता अर्पण में है। अर्चन में है। अर्पण व अर्चन एक हैं।

हम आशा करते हैं कि पं. चमूपति जी की उपर्युक्त अर्चनाओं को पढ़कर पाठकों ने भक्ति के सोम–सरोवर में स्नान कर आनन्द का अनुभव अवश्य किया होगा। इस अर्पण व अर्चन को संजो कर रखिये, बहुत काम आयेगी।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः09412985121